International Journal of Sanskrit Research 2017; 3(6): 162-164

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2017; 3(6): 162-164
© 2017 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 18-09-2017
Accepted: 22-10-2017

डॉ. राका शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
एन. के. बी0एम0जी0 कॉलेज,
चन्दौसी, उत्तर प्रदेश, भारत

Correspondence
डॉ. राका शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,
एन. के. बी0एम0जी0 कॉलेज,
चन्दौसी, उत्तर प्रदेश, भारत

डॉ. परमानन्द शास्त्री के साहित्य की सम्वेदना

डॉ. राका शर्मा

DOI: https://doi.org/10.22271/23947519.2017.v3.i6c.1940

प्रस्तावना

श्री परमानन्द शास्त्री का साहित्य विविधता से परिपूर्ण है, किन्तु उसमें एक अविरोधी स्वर निरन्तर विद्यमान है, वह है मनुष्यत्व की प्रतिष्ठा का। आजकल सब ओर से मानवता को दबाने का योजनाबद्ध एवं घृणित अभियान चालू है। शास्त्री जी को यह बात बहुत ही कष्ट देती है। वे स्वतंत्रता को मनुष्य के लिये सर्वोपरि मानते हैं । उनका मानना है कि किसी की भी स्वतंत्रता को छीनने का अधिकार किसी को भी नहीं है –

जलं नभो भूः पवनश्च वह्नि सर्वे स्वतन्त्रा जगति प्रजाताः।
तेभ्यः समुत्पन्नजनः कथं न बत स्वतन्त्रोमनुजेन सह्यः।। (जनविजयम् 1/18)

मजदूरों के श्रम का शोषण उन्हें उद्विग्न करता है। उन्हें यह बात बहुत कष्ट देती है कि उत्पादन कोई और करे और उसके लाभ का भोग कोई और करे। मिट्टी, ईंट, पत्थर और लौह खण्डों में अपने शरीर को गलाकर जो नये–नये भवनों का निर्माण करते हैं वे बेचारे श्रमिक बाद में, उसमें पैर भी नहीं रख सकते। शरीर ह्रदय, बुद्धि इनकी समष्टि से निर्मित श्रम के मूल्य को उन्हें कौन देता है ? उन्हें जो मिलता है उससे उनकी उदरपूर्ति बड़ी कठिनता से होती है। जैसे–तैसे शरीर ढका जा सकता है–

मृदिष्टिका प्रस्तर–लौह–खण्डैः संघृष्य देहं नववास्तुरूपम् ।
निर्मान्ति ये ते श्रमिकाः वराकाः पदं न दातुं प्रभवन्ति तत्र ।।
शरीर–ह्रद –बुद्धि समष्टि–निष्ठ–श्रमस्य मूल्यं तु ददातिकोऽत्र–।
दत्तेन तेनोदरपूर्तिरेव प्रच्छादनं वा वपुषोऽपि तु स्यात् ।। (जनविजयम् 1/72,73)

प्रवंचना, दुर्बलता, अपमान, कुण्ठा, निराशा, अज्ञान, दैन्य, भाग्यवादिता, क्षुधा, शोषण, उत्पीड़न से ही नहीं अपितु उन्हें अपने अस्तित्व का बोध करने में भी असमर्थ बनाकर व्यवसायी वर्ग उनके श्रम को खरीदते हैं। स्वयं वातानुकूलित भवनों में तथा हाथों मे सुरापात्र लिए हुए व्यापारीगण अपनी व्यापार वार्ता में तल्लीन रहते हैं (जनविजयम् 1/74–79)

निर्धनों को बचपन में ही बुढ़ापा आ जाता है। धनाभाव से वे जवानी में ही बूढ़े दिखायी पड़ते हैं। जैसे–तैसे पेट भरने के अतिरिक्त उनके पास अन्य कोई विद्या नहीं है। बच्चे उत्पन्न करने वाले और स्त्रियों को पीस डालने वाले भोग के अतिरिक्त कोई अन्य क्रीडा नही होती तथा किसी भी प्रकार न चुकने वाले ऋण के अतिरिक्त अन्य कोई भाग्य नही होता।(गन्धदूतम्, पूर्वगन्ध : 32, 33)

कवि बेजुबान और शोषित मजदूरों को इस व्यवस्था का विरोध करने में सक्षम बनाना चाहता है, जिससे वे शोषकों का डटकर विरोध कर सकें।

आज की दूषित राजनीति ने कवि का ध्यान सर्वाधिक आकृष्ट किया है। कुर्सी पाने के लिये लोग क्या–क्या नहीं करते–

बन्धूनप्यतिसन्दधत्यथ जनानायोधयन्ति, क्षमां,
विश्वासं च निहत्य यान्ति खलतामर्चन्त्यनर्च्यानपि।
विश्रब्धं परिवर्तयन्ति च दलं वासांसि लोको यथा
किं किं पातकमाचरन्ति न नराः कुर्सि ! त्वदीयाप्तये।।
(परमानन्द सूक्तिशतकम् 91)

राजनीति को आधुनिक नेताओं ने अत्यन्त दूषित कर दिया है। जो षड्यन्त्र करने में जितना सफल होगा उसे राजयोग उतना ही सुलभ होगा। (वानर संदेशः 39)
नेता की बड़ी ही सुंदर परिभाषा शास्त्री जी ने की है–

सत्येऽसत्येऽनुचित उचित यश्च भेदं न कुर्यात्
ब्रूते स्वच्छं भ्रमति रमते मुक्तचारित्रय बन्धः।
दन्ते शुद्धं वचनमचिरात् सम्पदोङ्गीकरोति
यन्नोदत्वा नयति सततं सर्वमस्यात् स नेता ।।
(वानरसंदेशः 40)

दलबदलू नेताओं पर करारा व्यंग्य करते हुए कवि कहता है जो अपने दल को लोभवश एकदम छोड़ देता है, मच्छर की भाँति छिद्र देखकर यत्र–तत्र प्रविष्ट हो जाता है, दूसरे की थाली बलपूर्वक खींचकर अपने आगे कर लेता है वह नेता होने का पहला फल प्राप्त कर लेता है। ऐसे नेता कुर्सी के लिए सब कुछ न्यौछावर करने के लिये तैयार रहते हैं
कुर्सी सत्ता का प्रतीक है। सत्ता में रमण करने वाले किसी योगी से कम नहीं होते
(वानरसंदेश 26)
कवि शुब्ध होकर ऐसे नेता के विषय में पूछता है जो चरित्र और लज्जा को त्यागकर पद के लोभ में दल–बदल करता है उसमें और एक घर से दूसरे घर मे टुकड़े के लिये जाने वाले कुत्ते में क्या अंतर है–

चरित्रलज्जे परिहाय् नित्यं दलाद दलं यः पदलिप्सुरेति।
गृहाद् गृहं ग्रासकृतेऽप्लोऽस्था भवन्नु को ब्रत्र शुनो विशेषः।। (विप्रश्निका 64)

छात्रो को दूषित राजनीति में प्रवृत्त करने वाले नेता देश के पैरों में कुठाराघात कर देते हैं। कवि सोचने पर विवश हो जाता है कि छात्रों और नेताओं में से किसका दोष अधिक है। (विप्रश्निका 22)
ग्राम्य संस्कृति के प्रति भी कवि को बहुत लगात है। 'ग्राम्य त्वदीया स्मृतिर्न याति' इस गीत में कवि का ग्राम्य संस्कृति के प्रति प्रगाढ़ प्रेम दिखायी देता है–

यद्यपि गतं जीवनं नगरे, ग्राम! तदपि ते स्मृतिर्न याति ।
किमपि क्वचिदेतादृशमासीद यदभावो हृदयं मथ्नाति ।
प्रातर्मन्थरवो दधिगन्धो निद्रालश्च चक्रिकानादः
प्रांगणोत्स उत्थितो वत्सलः पयस्विनीधेन्वा हुंनादः
चत्वरतरौ रवो विहगानां, पारावातकूजनं विटंके,
घण्टीरवो गवां रथ्यायां मृदु नूपुरशिंजितं गृहांके।
अद्यापि श्रुतियुगं प्रीणयन् मानस परिणाहं परिमाति
यद्यपि गत जीवनम् नगरे ग्राम। तदर्पिने स्मृतिर्न याति
सौदर्य स्नेहः स भागिन्याः भातृवधूटीनां परिहास,:
वृद्ध पितृव्या – स्निग्धगालयों, मातृर्ममताया आकाशः,
पितामहस्नेहः पितुरधिकः, पितामहयाशीर्वचः प्रवाहः,
बालसखानां धूलिक्राडा, प्रीतिकलहमैत्री निर्वाहः
तद्वैराज्यं सम्बन्धानां मनोबलं बहुशः पुष्णाति।
यद्यपि गतं जीवनं नगरे ग्राम। तदपि ते स्मृतिन याति
(स्वरभारती पृ.88)

भोली भाली ग्राम्य संस्कृति को निगलती हुई नगरीय संस्कृति की भयावहता तथा वर्तमान प्रगति पर व्यंग्य करता हुए कवि का मन सोचने पर विवश हो जाता है–

हीनैर्महद्भिद्रुतगामियानैः प्रधावतो दिशु जनान् विलोक्य ।
उन्मत्तता वा प्रगतिः किमेषा ? मतिस्तु नित्यं विचिकित्सते मे।।
(जनविजयम् 1/94)

छूआछूत के विषय में कवि बहुत उदार है। वह इसे समाज का कलंक मानता है। उसके अनुसार कर्म ही व्यक्ति के उच्चता के हेतु हैं, जन्म नहीं (कौन्तेयम् कर्णः 43,44)
देश को वास्तविक उन्नति तभी हो सकती है जब छूआछूत दोष समाप्त हो जाए। अन्त्योदय और सर्वोदय हो तथा दरिद्रता को दूर करने के लिए निवासियों में सन्मति हो–

जायन्तां हि निरामयाश्च सुखिनः सर्वे जनाः भूतले
आसंशेयमिह प्रयातु सततं तत्कर्मणा सङ्गता।
अन्त्यस्यापि यदोदयो ननु तदा सर्वोदयः संभवेद्
दारिद्रयस्य विदारिणी समुदियादेषा जने सन्मतिः।
(भारतशतकम्:107)

कवि नारी के प्रति संवेदनशील है। पुरुष द्वारा किये गये शोषण के प्रति बहुत दुःखी है। नारी को भोग्या समझने वाले पुरुषों का कवि निर्मम आलोचक हैं

वसन–वास–धरान्नगवादिवद् राजतरत्नसुवर्णवसूपमाः ।
हदि नृणां बत भोग्यतया सदा युवतयो न तु योग्यतया स्थिताः ।।
यदपि योऽपि यदापि यथेच्छति तदिव सोऽपि करोति तदा तथा।
व्यवहरन्ति हरन्ति यदृच्छया प्रविहरन्ति नरा ललनाजने ।।

कवि ऐसे पुरूषो की भर्त्सना करता है जो अपने मन की मौज मस्ती के लिए स्त्रियों की अदला बदली करते हैं। यहाँ तक कि दाव पर लगाकर जुआ भी खेल लेते हैं। मनमानी करते हैं। शत्रु की बहू–बेटियों को गाय–घोड़ो के समान लूटकर ले जाते हैं। उन्हें विषकन्या तक बना डालते हैं और अपने शत्रुओं को जीत लेने का साधन बनाते हैं।प्रेम, मुग्धता और लोभ के कारण (ठगी हुई स्त्रियों को वे बलपूर्वक अपना शरीर बेचने के लिये बाध्य करते हैं। (चीरहरणम् 11 /13–20)
वधूदाह और दहेज जैसी विकट समस्याओं ने कवि को अनेकशः व्यथित किया है–

भ्रातः पश्य तथा श्मशान सरणावारणि संरक्षणे
कस्या नीयत एष हन्त! हुतभुदग्धतरुण्याः शवः ।
वक्षस्ताडितकेन शोक– विकलैराक्रन्द्यते बन्धुभिः
धिक्कारः स्फुटितोऽद्य कोऽपि नगरे 'स्टोव' पुनः कौतुकी ॥
(परमानन्द सूक्ति शतकम् 73)

जहाँ प्राचीन भारत में होने वाले नारियों के सम्मान ने कवि को आकृष्ट किया है वही वे वर्तमान काल में नारी के प्रति होने वाले अत्याचारों से बहुत दुःखी है। कन्या पितृत्व, नारी शोषण शीलभंग आदि उन्हें द्रवित कर देती है–

संजातं स्खलनं गते तु समये नार्यो बहु न्यक्कृताः
पुंसां दोषभराद, विपत्करमभूत् कन्यापितृत्वंत ततः।
नारी–शोषण–शीलभंग–छलना लोभाद् वधूनां वधो
मर्त्याः किं नु चरन्ति नात्र दुरितं नारीषु हा! साम्प्रतम्।
(भारतशतकम्:74)

प्रतिभा पलायन की ओर भी कवि की सूक्ष्म दृष्टि पड़ी है। उनका मानना है कि प्रभूत मात्रा में धन व्यय करके अध्ययन करने पर भी आजीविका न मिल पाने के कारण प्रतिभा प्रवाह को विदेश जाने पर विवश होना पड़ता है। (विप्रश्निका 70)
आरक्षण की समस्या ने भी कवि का ध्यान आकृष्ट किया है। वे कहते हैं कि जो लोग योग्यता को धक्का देकर अक्षम व्यक्तियों को कार्य में लगाते हैं ऐसे आरक्षणवादी कार्यकुशलता, बुद्धि, भेदभाव

और अयोग्यता में किसकी रक्षा करते हैं? वैज्ञानिक और शिक्षकों के पद भी धन की शक्ति और आरक्षण के बल पर लोग हथिया लेते हैं। (विप्रश्निका 95)

युद्ध के विषय में कवि का चिन्तन बहुत गम्भीर है। उनके मत में संसार मे जो कोई भी व्यक्ति दल , वर्ग, या प्रदेश युद्ध छेड़ता है वह मानव अधिकारों को क्षीण करता हुआ मानव जाति का शत्रु ही है। सारी पृथ्वी एक कुटुम्ब है यही आदर्श रहना चाहिए। पृथ्वी पर सभ्यता का जो विकास लाखों वर्षों में हो पाया है वह युद्ध में पाला पड़ने पर उपवन की शोमा के समान लुप्त हो सकता है। जीतने वाला और हारने वाला दोनो ही जर्जर हो जाते हैं । इसी कारण बुद्धिमान् लोग युद्ध को 'आत्मवध' कहते हैं। यदि धर्म की स्थापना करने के लिये युद्ध करना पड़े तो युद्ध करने में कोई हानि नहीं है क्योंकि दुष्टों मे, ऋजुता नीति नहीं कहलाती है। (चीरहरणम् 12/56–62) (कौन्तेयम् कृष्णः 32, 33)।

कवि मानव के सर्वविध कल्याण, विश्वनागरिकता, शोषण के ध्वंस और सौहार्द का पोषक, और घातक आयुधों पर रोक का प्रबल समर्थक है–

शंकाद्वेषभियामवलोपो युधायुधानां पूर्णविरामः,
राष्ट्राणां स्यादेका संसत्, सम्र सम सर्वकारोऽप्यभिरामः ।
निर्बाधं च गमनमागमनं सर्वत्र स्यान्नृणां जगत्यामू ,
समा अवसराः स्युः सर्वेषां पुंसां वैयक्तिक प्रगत्याम्।।
भवेच्छेयसेऽखिल वादानां मानववादे लयः सत्वरः,
सर्व विश्वं भवतु कुटुम्बं सर्वे मनुजाः सदा भ्रातरः ।। (स्वर भारतीः पृष्ठ 160)

कवि अध्यात्म पर, लम्बे–लम्बे भाषण देने वाले किंतु अंदर से असंयमी, स्वार्थपर और अर्धपिशाचों से सभी को सावधान रहने की प्रेरणा देता है।(विप्रश्निकाः 70। शिक्षाजगत् से जुड़े होने के कारण शास्त्री जी उसकी विकृतियों और समस्याओं से भलीभाँति परिचित है। गुरुओं का आदर न करने वाले छात्रों को तथा पक्षपात करने वाले गुरुजनों को वे आचार भंग का पातकी मानते हैं– अध्यापिता ये गुरुं नाद्रियन्ते ये पक्षपातं गुरवश्चरन्ति । आचार्यवर्याः सुविचार्य वाच्यमाचारभंगः कतरोऽतिशेते । (विप्रश्निका रू 56)

धार्मिक उन्माद एवं धार्मिक स्थलों के दुरुपयोग जैसी समस्याओं से भी कवि की लेखनी अछूती नही रही है।–

अशान्तिमुत्तेजयितुं समाजे धर्मस्थलानामधमोपयोगात्
नाहं विजाने कथयन्तु सन्त आस्तेऽपरं पात्कमत्र किंचित्?
धर्महितेर्ष्याः परधर्मणां ये चरन्ति जाल्मा गृहदाहहत्या
नाहं विजाने सुधियो वदन्तु ते किन्नरा मानवतां वहन्ति?(विप्रश्निकाः 66,67)

कवि जनसंख्या वृद्धि से भी बहुत चिन्तित है। उनके अनुसार बहुत सारी उन्नति और सारा उत्पादन सुरसा के मुख में एक कण की भाँति दिखायी देता है–

वस्तुत्पादनमत्र हन्त ! महताऽडयासेन यद्वर्धितम्
जातं तत्सुरसामुखे कण इवानायासवृद्धौ जने।

बढ़ते भ्रष्टाचार पर कवि कहता है भ्रष्टाचार रावण की भाँति समस्त दिशाओं को व्याप्त करता हुआ, साधुओं को कष्ट देता हुआ निरन्तर सर्वत्र फैलता जा रहा है–

भ्रष्टाचार इहोदितो दशमुखः सर्वान् दिगन्तान् ग्रसन्
रुन्धन् साधुजनान् विषादितबुधः सन्नीतिसीताहरः
धारारोधिसहस्त्रबाहुरभवद् राष्ट्रोन्नतेर्नो चिरात्
को रामोऽद्य सहस्त्रशीर्षमघुना हन्यादिमं भारते।(भारतशतकम् : 88)

आज के भारत की दुर्दशां कवि को व्यथित करती है। आज भौतिक लाभ ही व्यक्ति का लक्ष्य हो गया है। आध्यात्मिक वृत्ति का लोप हो गया है, धन ही प्रधान हो गया है। शराब लोकप्रिय हो गयी है। यहाँ तक तो किसी प्रकार सहय है परन्तु सत्ता और धन के लिए जो चरित्र हनन किया जा रहा है, वह हृदय में शूल की भाँति खटकता है। (भारतशतकम् :109)

नशाखोरी की राष्ट्र ग्रासिनी प्रवृत्ति से वर्तमान पीढ़ी को ग्रस्त देखकर कवि विचलित हो जाता है। शराब के कारण लक्ष्मी जाती रहती है। गृहलक्ष्मी प्रेमविरत हो जाती है। बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है और कल्याण वृद्धि का भूल ही विचलित हो जाता है। नशाखोरी पति–पत्नी के रिश्ते के विघटन का कारण तो होती ही है शराबी व्यक्ति का समाज में भी तिरस्कार होता है। (गन्धदूतम् : उत्तरगन्ध : 33–44)

कवि निर्भीक और अपने कर्म के साथ न्याय करने वाले व्यक्ति को सम्माननीय मानते है वह कहते हैं कि भय और लोभ से दूषित वाणी प्रजा का कभी कल्याण नहीं कर सकती है –

भयेन लोभेन च दूषितावाग्।
भवेत् प्रजानां किमनामयाय?(विप्रश्निकाः 5)

कवि का जीवन संस्कृतमय है। संस्कृत को वे देश का गौरव मानते हैं। संस्कृत के प्रति उनकी अनन्य श्रद्धा इन शब्दों में प्रकट हुई है–

ऋषि–मुख–मन्त्र परित्रितो द्गमा ब्राह्मणलसदक्षययागा,
ब्रह्मद्रवगाहन–पावन–तनु–मुक्तविधौ संहूतरागा,
सम्भयतमंमन्या अपि यस्या (हृदि कुर्वन्त्युपनिषन्मतिम्,
यस्या योग्यमवाप्य शरण्यं जनो जिहासति भोगरतिम्–
कालसरिति निष्णाता जाता ज्ञानागम–प्रावारा।
जयति भारते, जयति जगत्यां, देवगवी नवरससारा ।(स्वरभारती पृष्ठ 28)

अनुशासित व्यक्ति ही समाज को सही दिशा दे सकते हैं। जो अनुशासन का नाम तक नहीं जानते यदि वे शासन करने लग जाएँगे तो जनता उनके आश्वासनों से कभी संतुष्ट नहीं हो पाएगी। (विप्रश्निका 85)

कवि समस्त बुद्धिजीवियों का आह्वान करते हैं वे आगे आयें और लोक को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जाएँ। यदि वे ऐसा नहीं करते हैं तो अपने कर्तव्य का पालन नहीं करते–

रे सूरयश्चिन्तकपत्रकाराः। ज्योतिर्हि लोकं तमसो नयेथ।
सूर्यः स हर्ता तमसां यदि स्थात् लुप्तोऽन्धकारे तु जनस्य किं स्यात्।।
(जनविजयम् 1/89)

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. जनविजयम्
2. गन्धदूतम्
3. परमानन्द सूक्ति शतकम्
4. वानरसंदेशः
5. विप्रश्निका
6. स्वरभारती
7. चीरहरणम्
8. कौन्तेयम् कर्णः
9. भारतशतकम्